हिंदी भाषा का इतिहास

भारोपीय परिवार **[Indo-European]**

भारत से लेकर प्रायः पूरे यूरोप तक बोले जाने के कारण इस परिवार को भारोपीय परिवार कहते है। इसका क्षेत्र एशिया में भारत, बांगला, पाकिस्तान श्रीलंका, अफगनिस्तान, ईरान, यूरोप मे रूस, रुमानिया, फ्रांस, पोर्तुगल, स्पेन, इंग्लैंड, जर्मनी, अमेरिका, कनाडा, अफ्रिका, आदि अनेक भागों में बोला जाता है।

भारोपीय परिवार का महत्व अनेक कारणों से है-----

1) भगोलिक क्षेत्र **:--** यह विश्व के बहुत बड़े भागों में बोली जाती है अर्थात भौगोलिक क्षेत्र बड़ा है।
2) बोलियों की संख्या अधिक **:--** इसमें अन्य भाषाओं की तुलना में भाषा तथा बोलियों की संख्या अधिक है।
3) भाषा बोलनेवालों की संख्या अधिक **:--** इस परिवार की भाषा बोलनेवालों की संख्या अधिक है।
4) अधिक मात्रा में साहित्य रचना **:--** साहित्य रचना में भी यह परिवार अग्रणी है।
5) सर्वाधिक अध्ययन **:--** इस परिवार की भाषाओं और बोलियों का अध्ययन-विश्लेषण विश्व में सर्वाधिक है। 6)
6) **6)** अनेक विद्वानों का योगदान **:--** भाषा विज्ञान के विकास में अनेक विद्वानों का कार्य जैसे – पाणिनी, भृतहरी, ससुर, चोंम्स्की आदि।

भारोपीय परिवार की भाषाओं के बोलनेवालों के पूर्वज किसी युग में एक ही स्थान पर रहते थे। कालांतर में इनके अनेक समूह भिन्न क्षेत्रों में फैल गए और इस क्रम में उनकी एक शाखा यूरोप की ओर चली गई। ब्रेडके नामक एक विद्वान ने एक वर्ग को शतम वर्ग तथा दूसरे वर्ग को केंटुम वर्ग कहा है। शतम वर्ग के अंतर्गत भारत-ईरानी उप-परिवार आता है। इसका विभाजन हम निम्नानुसार कर सकते है।

भारोपीय परिवार **[Indo-European]**

↓

शतम वर्ग | केंटुम वर्ग

शतम वर्ग ↓

भारतीय आर्य भाषा | ईरानी परिवार

भारतीय आर्य भाषा ↓

प्राचीन भारतीय आर्य भाषा **[** लौकिक संस्कृत, वैदिक संस्कृत **]**
(2000 ई. पू. से **500** ई. पू. **)**

↓

मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा **[** पाली, प्राकृत, अपभ्रंश **]**
(500 ई. पू. से **1000** ई. **)**

↓

आधुनिक भारतीय आर्य भाषा **[** हिंदी, मराठी, गुजराती, पंजाबी, असमी, बंगाली इत्यादि **]**
(1000 ई. से अब तक **)**

By Dr. Sangita Chitrakoti

भारतीय आर्य भाषा

भारतीय आर्य भाषा भारोपीय परिवार की सर्वाधिक प्रमुख भाषा है। जिसका विकास 'शतम वर्ग' की भारत ईरानी शाखा से हुआ। विकास की दृष्टि से भारतीय आर्य भाषा को तीन चरणों में विभाजित किया जाता है।जैसे की हमने ऊपर देखा।

1] प्राचीन भारतीय आर्यभाषा (2000 ई.पू. 500 ई.पू. तक)
2]मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा (500 ई.पू. 1000 ई.)
3] आधुनिक भारतीय आर्य भाषा (1000 ई. से अबतक)

प्राचीन भारतीय आर्यभाषा **(2000 ई.पू. 500 ई.पू. तक)**

भारतीय आर्य भाषा भारोपीय परिवार की सबसे प्रमुख भाषा है। जिसका विकास' शतम' वर्ग से हुआ। इसका पहला चरण प्राचीन भारतीय आर्य भाषा है जिसका विकास 2000 ई.पू. से 500 ई.पू. माना जाता है। आर्यों के आगमन के पूर्व भारत में अनेक अनार्य जातियाँ विद्यमान भी। जिनकी भाषा भारत में प्रचलित थी। इन अनार्य जातियों में अपने द्रविड़, आग्नेय,निग्रो, किरात आदि जातियां प्रमुख थी। कालांतर में आर्यों के अनेक समूह भारत में बस गए। आर्य भारत में आए तो उनके सामने द्रविड़ सबसे बड़ी चुनौती थी। क्योंकि द्रविड़ कुल की जातियाँ सांस्कृतिक दृष्टि से अधिक उन्नत रही है। मोहन-जोदड़ो, हड़प्पा कि खुदाई में उपलब्ध अवशेषों से पता चलता है कि ये नगर संस्कृति के समर्थक थे और वे समृद्ध भी थे। इसलिए आर्य तथा द्रविड़में युध्दजन्य परिस्थिति निर्माण हो गई थी।

निग्रो जाति अफ्रीका के साथ आए थे। उनका क्षेत्र समुद्र का तटवर्ती क्षेत्र था। इसलिए आर्यों के साथ उनका कोई संबंध नहीं आया। किरात पहाडी जाति थी। ये लोग शांतिप्रिय थे अतः वे आर्यों के सहयोगी बन गए। तथा आग्नेय जाति ने भी आर्यो को सहयोग दिया। आग्नेय लोग छोटी-छोटी बास्तियों में रहते थे। ग्रामीण संस्कृति के पोषक थे। आर्य लोगों ने इनसे कृषी कार्य अपनाया। उनके कुछ शब्दों को ग्रहण किया है – जैसे ज्वार, बाजरा, नारियल, केला आदि ।

इन सभी भाषाओं का भारतीय आर्य भाषा पर प्रभाव पड़ा। इस प्रकार भारत में आए आर्यो एवं द्रविड़ों तथा अन्य भारतीय मूल के निवासियों के पारस्पारिक आदान-प्रदान से जिस भारतीय आर्य भाषा का विकास हुआ। उसे वैज्ञानिक आधार पर प्राचीन भारतीय आर्य भाषा कहा जाता है। इस प्राचीन भारतीय आर्यभाषा के वैदिक और लौकिक संस्कृत दो रूप मिलते है।

वैदिक भाषा

इसे प्राचीन संस्कृत, वैदिकी, वैदिक संस्कृत, या छंदस आदि अन्य नामों से भी पुकारा जाता है। यह वैदिक भाषा ही प्राचीन भारतीय आर्य भाषा है। वैदिक काल में आए आर्यों का मूल ग्रंथ ऋग्वेद है | ऋग्वेद की भाषा भारतीय आर्यों की उपलब्ध प्राचीनतम भाषा का उदाहरण है। कालांतर में अनेक वेदों की रचना हुई। जिस पर द्रविड़ आदि भाषा का प्रभाव दिखाई देता है। वैदिक साहित्य में इस भाषा का निश्चित रूप नहीं मिलता क्यों कि वैदिक भाषा मूलतः मौखिक होने के कारण पर्याप्त अव्यवस्थित थी।

लक्षण :--

1] वैदिक में केवल तत्पुरूष, कर्मधाराय, बहुब्रीवी, एवं द्वंद्व ये चार ही समास मिलते है।
2] वैदिक भाषा में तीन लिंग थे -- पुल्लिंग, स्त्रीलिंग, नपुंसकलिंग।
3] वैदिक भाषा में तीन वचन थे -- एकवचन, द्विवचन, बहुवचन।
4] स्वराघात तीन प्रकार के थे-- 1] उदात्त (उच्च) 2] अनुदात्त (नीच) 3] स्वरित (मध्य)
5] वैदिक में तीन बोलियों का उल्लेख मिलता है –

- ❖ पश्चिमोत्तरी - अफगाणिस्तान से पंजाब
- ❖ मध्यवर्ती - पंजाब से मध्य, उत्तर प्रदेश
- ❖ पूर्वी – उत्तर प्रदेश से पूर्व तक

6] वैदिक में 'ऌ' का उच्चारण स्वरवत होता था।

इस प्रकार हम वैदिक भाषा के बारे में लक्षण जान सकते है।

लौकिक संस्कृत

इसे संस्कृत तथा क्लासिकल संस्कृत भी कहते है। वाल्मिकी रामायण में संस्कृत शब्द का अर्थ– संस्कार की गई या शिष्ट बताया है। संस्कृत शब्द का प्रथम उल्लेख वाल्मिकी रामायण में ही मिलता है। लौकिक संस्कृत वैदिक भाषा का ही विकसित रूप है। वैदिक भाषा मूलतः मौखिक होने के पर्याप्त अव्यवस्थित थी। उसका व्याकरणिक संस्कार होने के कारण उसका नाम संस्कृत पड़ा। भाषा का प्रथम संस्कार पाणिनी ने किया। अत: पाणिनी के युग से संस्कृत का विकास माना जाता है–

इस प्रकार वैदिक भाषा ही मूल भारतीय आर्यभाषा है तथा उसका परिष्कृत रूप।

प्राचीन काल में आर्य भाषा का महत्व काफी बढ़ गया था इसलिए उसका बोलना गर्व कि बात समझी जाती थी इसलिए पाणिनी ने इस भाषा एक मानक रूप स्थिर किया तथा पाणिनी ने ही इसे देववाणी नाम दिया और संस्कृत भाषा को लौकिक भाषा के रूप में स्थिरकिया। संस्कृत कालांतर में संस्कृति एवं साहित्य की मुख्य भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हुई। सामान्य बोलचाल में इसका व्यवहार 500 ई.पू. तक होता रहा। जर्मन विद्वान श्लेगल के अनुसार " संसद की भाषाओं में कोई भी भाषा इतनी पूर्ण और उन्नत नहीं है जितनी की संस्कृत भाषा।

लौकिक संस्कृत भाषा के लक्षण :--

1] समास प्रयोग की वृत्ति बढ़ गई। गद्य और पद्य में बड़े-बड़े समास लिखे जाने लगे। द्विगु, अव्ययीभाव ये समास बढ़े।
2] लौकिक संस्कृत काल में पश्चिमोत्तरी, मध्यवर्ती, दक्षिणी और पूर्वी ये चार बोलियाँ थी।
3] लौकिक संस्कृत साहित्यिक एवं परिनिष्ठित है।
4] लौकिक संस्कृत नियमबध्द और एकरूप है।
5] लौकिक संस्कृत में तीन लिंग मिलते थे– पुल्लिंग, स्त्रीलिंग, नपुसकलिंग
6] तीन वचन प्राप्त होते थे– एकवचन, द्विवचन, बहुवचन
7] 'ऌ' का उच्चारण 'ल्रि' जैसा होता था।

वैदिक तथा लौकिक संस्कृत में अंतर :--

- ❖ वैदिक भाषा का परिनिष्ठीकरण नहीं हुआ था। इसलिए वैदिक परिनिष्ठित भाषा नहीं बल्कि लौकिक पारिनिष्ठित और साहित्यिक भाषा बन गई।
- ❖ वैदिक भाषा स्वच्छद है किंतु लौकिक नियमबद्ध और एकरूप है।
- ❖ ऋ और ऌ ध्वनियाँ थी जो संस्कृत में लुप्त हो गई।
- ❖ ए और ओ का उच्चारण वैदिक में 'अई', 'अऊ' था। अर्थात ये संयुक्त स्वर थे किन्तु संस्कृत में ये मूल स्वर हो गए।
- ❖ वैदिक में गीतात्मकता, स्वराघात, और बलाघात दोनों थे किंतु संस्कृत में केवल बलाघात रह गया।
- ❖ वैदिक में बड़े-बड़े समास बनने लगे की प्रकृति नहीं थी लेकिन संस्कृत में गद्य और पदय में भी बड़े-बड़े समास बनने लगे।

- ❖ वैदिक में केवल चार समास थे – 1] तत्पुरुष 2] कर्मचाराय 3] बहुब्रिही 4] द्वंद्व। किंतु संस्कृत में द्विगु और अव्ययीभाव समास भी प्रयुक्त होने लगे।
- ❖ वैदिक भाषा में वर्णो की संख्या 64 थी जो संस्कृत में कम हो गई।
- ❖ वैदिक में विजातीय शब्द विशेषतः द्रविड़ एवं आस्ट्रिक से यूनानी, रोमन, अरबी, ईरानी, तुर्की चीनी आदि विजातीय भाषाओं के शब्द मिलते हैं।
- ❖ वैदिक में पाश्चिमोत्तरी, मध्यदेशी तथा पूर्वी ये तीन बोलियाँ थी लेकिन संस्कृत में इन तीनों के साथ दक्षिणी बोली भी मिलती है।

मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा

प्राचीन भारतीय आर्य भाषा व्याकरणिक नियमों के कारण जटिल बन गई। इसी जटिलता के कारण जन सामान्य में इसका प्रचलन कठिन हो गया तथा संस्कृत भाषा विकास के क्रम में जनता से दूर हो गई। भाषा के नियम के अनुसार संस्कृत का अपभ्रष्ट रूप प्रचलित हो गया। जब जनता में इस अपभ्रष्ट रूप का प्रयोग बढ़ा तो संस्कृत केवल शिक्षित समुदाय की भाषा बन गई। जनभाषा को ही मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा नाम दिया गया। इसका उदय छठी शति में हुआ।

कालक्रमानुसार मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा के तीन विकास स्तर मिलते है –

- ➢ पालि [600 ई. पू. से प्रथम शती तक]
- ➢ प्राकृत [प्रथम शती से छ्ठी शती तक]
- ➢ अपभ्रंश [छ्ठी शती से दसवीं शती तक]

पालि [600 ई. पू. से प्रथम शती तक]

पालि को प्रथम 'प्राकृत', 'मागधी' या देश भाषा भी कहा जाता है। मोटे रूप में इसका काल 600 ई. पू. से प्रथम शती तक माना जाता है। मध्यकालीन आर्यभाषाओं में सर्वप्रथम पाली भाषा का विकास हुआ। जब संस्कृत भाषा साहित्यिक स्तर पर सर्वोत्कृष्ट थी तो ग्रामीण स्तर पर पाली विद्यमान थी। कालांतर में संस्कृत की भाँति पालि में भी साहित्य रचना हुई तो उसका महत्व बढ़ गया और वह जनभाषा और साहित्यिक भाषा दोनों रूप में विद्यमान हुई।

पालि शब्द की व्युत्पत्ति विवादास्पद है। विद्वानाने पालि के संदर्भ में विविध मत व्यक्त किए है।

श्री विधुशेखर भट्टाचार्य तथा बहुत सारे विद्वान पंक्ति द्वारा पाली का विकास मानते है क्योंकि शुरू में बुद्ध की पंक्तियों के लिए उसका उपयोग हुआ था। बाद में उसका विकास होकर वह पालि बन गयी।

पंक्ति > पन्ति > पत्ति > पट्ठि > पल्लि > पालि

पालि शब्द पल्लि का ही विकास है और उसका अर्थ है 'गाँव की भाषा'

किंतु पंक्ति का पालि बन जाना ध्वनि परिवर्तन के नियम के अनुकूल नहीं है। कुछ विद्वान प्राकृत शब्द से पालि की व्युत्पत्ति मानते हैं।

प्राकृत > पाइअ > पालिअ > पालि

तो कुछ विद्वान पर्याय शब्द से पालि की व्युत्पत्ति मानते है –

पर्याय > परियाय > पलियाय > पालि

कुछ विद्वानो ने पालि का अर्थ पालन या रक्षा करना बताया है तो कुछ विद्वान पल्लि का अर्थ गाँव मानते हैं और इस प्रकार पल्लि की भाषा पालि कहा गया है।

एक अन्य मतानुसार पाटलिपुत्र की भाषा होने के कारण उसका नाम पालि पड़ा है।

पालि भाषा का विकास का क्षेत्र पाटलिपुत्र को माना जाता है और इसका विकास मागधी केआधारपर बताया गया है तो कुछ लोग इसे उज्जयिनी की भाषा मानते हैं। (अशोक के पुत्र उज्जयिनी में रहा करते थे) वस्तुतः पालि का सर्वप्रथम प्रयोग गौतम बुध्द ने किया था किंतु उसका लिखित रूप अशोक के शिलालेख में मिलता है। विद्वानों के मतानुसार गिरनार का शिलालेख ही मूल पालि के निकट है तथा वह मागधी से प्रभावित है। अत: मागधी को ही पालि का मूल क्षेत्र मानना चाहिए। वस्तुतः पालि बौद्ध धर्म के प्रसार के साथ न केवल समग्र भारत की भाषा बन गई वरन उस युग में उसका आंतरराष्ट्रीय महत्त्व बन गया था। उसका प्रसार चीन, जापान, और लंका तक था। आज भी उसका स्वरूप उन्हीं देशों में सुरक्षित है।

पालि में गौतम बुद्ध के उपदेशों का संग्रह, त्रिपिटिक कथाएँ, अट्ठकथाएँ जैसे बौद्ध धर्म के समग्र ग्रंथ लिखे गए थे।

भाषा वैज्ञानिक विशेषताएँ

संस्कृत से पालि में पर्याप्त अंतर आ गया जो इस रूप में रखा जा सकते है--

1] स्वरों में ऋ, ऌ, ऐ और औ लुप्त हो गए।
2]श, ष, स में से केवल 'स' रह गया |
3] व्यंजनांत पद स्वरांत हो गए - जैसे भगवान् > भगवा
4] व्यंजन द्वित्व हो गए। जैसे– दुर्लभ > दुल्लभ, सर्व > सव्व
5] 'म' ध्वनि अनुस्वार में बदल गई -जैसे- अम्बा, निम्ब
6] विसर्ग (:) का प्रयोग खत्म हुआ। विसर्ग के स्थान पर 'ओ' हो गया। जैसे– रामः > रामो
7] महाप्राणीकरण – कील > खील, पल > फल
8] अल्पप्राणीकरण – भगिनी > बहिणी

प्राकृत

मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा को विकास का दुसरा चरण प्राकृत है। महावीर जैन ने उपदेश दिए वे सभी प्राकृत भाषा में है। प्राकृत भाषा ज्ञान तथा साहित्य की भाषा बनी थी। प्राकृत शब्द का अर्थ है- 'सामान्य जन की भाषा' कुछ लोग इसे प्रकृति से उत्पन्न अर्थात संस्कृत में विकसित मानते हैं। पालि का महत्त्व पहली शती से कम होने लगा और उसके स्थान पर प्राकृत का प्रयोग बढ़ा।

प्राकृत अंत्यत लालित और मधुर भाषा थी। इसका साहित्य विपुल था तथा शृंगार की दृष्टि से उसका संस्कृत से भी अधिक महत्व था। राजशेखर ने तो यहाँ तक कहा कि संस्कृत भाषा कर्कश और प्राकृत भाषा सुकुमार है। तथा स्त्री-पुरुष में जो अंतर होता है। वही इन दोनों भाषाओं में है।

पाकृत के भेद ::-- प्राकृत के देशभेदानुसार अनेक रूप मिलते हैं। जिनमें पैशाची, अर्धमागधी, मागधी, शौरसेनी,और महाराष्ट्री प्रमुख है।

प्राकृत के भेद

⇓

⬇ ⬇ ⬇ ⬇ ⬇

पैशाची अर्धमागधी मागधी शौरसेनी महाराष्ट्री

❖ पैशाची :--

इसे पैशाचिकी, पैशाचिका, ग्राम्य भाषा, भूतभाषा, भूतवचन, भूतभाषीत आदि भी मिलते हैं। पैशाची, पिशाचों की भाषा थी। पिशाच याने 'भूत' इसी आधारपर अंतिम तीन नाम पैशाची को दिए हुए है। महाभारत में पिशाच जाति का उल्लेख है। पिशाच उन अनार्यों को कहा जाता है। जिन्होने आर्य संस्कृति को पूरी तरह नहीं अपनाया था। सिंध, बलेचिस्तान, और कश्मीर की भाषा पिशाची थी। पैशाची में ही कल्हण की राजतंरगिणी तथा गुणाढ्य की बृहतकथा लिखी गयी है। पैशाची का मूल रूप आधुनिक युग में प्राप्त नहीं है।

विशेषताएँ :--

।] 'ल' ध्वनि का 'ळ' में विकास - जैसे - जल > जळ
2] 'ण' के स्थानपर न की प्रवृत्ति है– जैसे के गुण > गुन
3] 'ष' के स्थानपर 'श' मिलता है-- विषम > विशम

❖ मागधी :--

मगध और उसके पूर्व की भाषा से हुआ है। उडिया तथा असमी का विकास इसी भाषा से हुआ है। कुछ लोग इसका संबंध महाराष्ट्र से भी मानते है। 'शाकारी' इसकी उपबोली थी।

विशेषताएँ :--

1] 'स' 'ष' के स्थानपर 'श' मिलता है।
2] 'र' का 'ल' होता है– राजा > लाजा
3] कहीं कहीं 'ज' का 'य' होता है – जायते > यायदे
4] 'स्थ' और 'र्थ' के स्थान पर 'स्त' होता है – अर्थवती > अस्तवती
5] विसर्ग (:) के स्थान पर ए होता है।

❖ अर्धमागधी

अर्धमागधी अवध और काशी जनपदों की भाषा थी । पूर्व हिंदी का विकास अर्धमागधी से ही हुआ है। इसका झुकाव शौरसेनी की ओर अधिक है आगधी की ओर कम| इसमें मागधी की प्रवृत्तियाँ अधिक मिलती है। इसलिए इसे अर्धमागधी नाम दिया है। अर्धमागधी में गदय तथा पदय दोनों में साहित्य लिखा गया है।

विशेषताएँ :--

1] इसमें मध्य व्यंजन 'ग' के स्थान पर 'य' मिलता है।
2] 'ष, 'श" के स्थानपर 'स' मिलता है। उदा. श्रावक > सवाक
3] अनेक स्थलों पर दंत्य ध्वनियाँ मूर्धन्य हो गई। स्थित > ठिय
4] गद्य तथा पद्य की भाषा में थोड़ा अंतर है।

❖ शौरसेनी :-

यह शूरसेन के आसपास की बोली थी। इसका विकास वहाँ की पालिकालीन स्थानिय बोली से हुआ। यह मध्यदेश की भाषा थी इसलिए कुछ लोग इसे संस्कृत की भाँति उस काल की परिनिष्ठित भाषा मानते है। शौरसेनी संस्कृत से प्रभावित थी। अत: इसमें प्राचीनता है। जैनों के दिगंबर संप्रदाय ने सांप्रदायिक ग्रंथों में इसका प्रयोग किया है।

विशेषताएँ :--

1] दो स्वरों के बीच में अनेमाला 'त' इसमें 'द' हो गया है। उदा. गच्छति > गच्छदि
2] 'क्ष'का विकास सामान्यतः 'क्ख' में हुआ। जैसे- इक्षु > इक्खु
3] 'ऋ' का विकास 'इ' होता है। जैसे - गृध्र > गिध्र
4] संयुक्त व्यंजन की सरलीकरण की प्रवृत्ति है। जैसे उत्सव > ऊसव

❖ महाराष्ट्री :--

महाराष्ट्री को उस युग में प्रमुख प्राकृत समझी जाती थी। इसका मूल स्थान महाराष्ट्र है। प्राकृत का अधिकांश साहित्य महाराष्ट्री में लिखा गया है। विद्वानों ने इसे महाराष्ट्र की प्राकृत कहा है। कुछ लोग इसे केवल महाराष्ट्र तक सीमित न मानकर महाराष्ट्र अर्थात पूरे भारत की भाषा मानते है। महाराष्ट्री प्राकृतों में परिनिष्ठित समझी जाती है। कुछ लोग इसे 'मराठा देश' से सम्बद्ध न मानकर पूरे भारत (महाराष्ट्र) की कहते हैं। एक मत यह है कि 'शक' अपने राज्य को महाराष्ट्र कहते थे । उनके इस महाराष्ट्र के आधार पर ही इसे पूरे राष्ट्र में बोली जाने के कारण महाराष्ट्री कहा गया

विशेषताएँ :--

1] इसमें दो स्वरों के बीच आने वाले अल्पप्राण स्पर्श प्रायः लुप्त हो गए हैं। उदा. गच्छति > गच्छइ
2] महाप्राण स्पर्श (ख,थ,फ,ध,घ) का केवल 'ह' रह गया है। उदा-मुख > मुँह
3] प्राकृत में मूर्धन्यीकरण की प्रवृति बढ़ गयी।
4] 'य' का 'ज' और 'व' का 'ब' हो गया (उदाra काव हो गया। उदा– यव > जब
5] 'प' का 'व' हो गया। उदा. ताप > ताव, लेप > लेव

अपभ्रंश

अपभ्रंश का काल छठी शती से दसवी शती तक माना जाता है। अपभ्रंश का अर्थ है 'बिगडा हुआ'। संस्कृत के वैयाकरणों ने संस्कृत के अतिरिक्त समस्त भाषाओं को अपभ्रष्ट कहा गया है किंतु भारतीय इतिहास में आभीरों की भाषा को अपभ्रंश कहा गया है। अपभ्रंश को अवहट्ठ, अव्वंभस ग्रामीण देसी, आभिरोक्ति, आभीरी भी कहा जाता है। डॉ. हरदेव बाहरी ने इसे आभिरों श्री भाषा कहा है। डॉ. चैटर्जी ने प्रकृत का अपभ्रष्ट रूप समझा है।

अपभ्रंश नाम सर्वप्रथम महर्षि पतंजलि द्वारा प्रयुक्त हुआ। कालांतर में विभ्रष्ट' कहकर सात भाषाओं का उल्लेख अपभ्रंश के अंतर्गत किया है। भामह के छठी शति में अपभ्रंश को संस्कृत-प्राकृत के समान एक भाषा कहा है। इस प्रकार 5 वीं शती से अपभ्रंश का विकास शुरु हुआ। लेकिन छठी शती में अपभ्रंश का महत्व संस्कृत प्रकृत के समान हुआ।

अपभ्रंश के रूप :--

- अपभ्रंश की बोलियों के संबंध में भी विद्वानों में मतभेद है। प्राचीन विद्वानों ने नागर, उपनागर, और ब्राचड़ इन तीन अपभ्रंशों का उल्लेख किया है।
- भरत ने सात अपभ्रंशों का उल्लेख किया है।
- आधुनिक भाषा वैज्ञानिक डॉ. याकोबी ने पूर्वी, पश्चिमी, दक्षिणी, उत्तरी चार अपभ्रंश मानी है।
- जब की नामवर सिंह ने पूर्व और "पश्चिमी दो भेद माने है।

विशेषताएँ :--

1] अपभ्रंश का झुकाव संस्कृत की अपेक्षा आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं की ओर अधिक है।
2] अपभ्रंश उकार बहुल भाषा थी। उदा. एक्कु, कारणु, अंगु
3] 'म' का अपभ्रंश में वँ हो गया। कमल > कवल

4] लिंग, वचन, कारक, विभक्तियाँ कम हो गयी। नपुसंक लिंग समाप्त हो गया।
5] अपभ्रंश में तद्भव शब्द अधिक मिलते है। दूसरा क्रमांका देशज शब्दों का है।
6] 'ष्ण' का 'न्ह' हो गया। कृष्ण > कान्ह
7] अपभ्रंश में अंतिम स्वर ह्रस्व होने की प्रवृत्ति बढ़ गई।जैसे - गर्भिणी > गब्भिणी > गब्भिणि
8] 'ड' 'द' न' 'र' के स्थान पर ल' हो गया। दलित > ललित
9] व्यंजन द्वित्वता प्राकृत में अधिक थी वह कम हो गई।
उदा. कर्म > कम्म > कमु

आधुनिक भारतीय आर्यभाषा **[1000 ई. से अबतक]**